पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

स्थापना

(अनुष्टुप)

उत्तमक्षान्तिकाद्यन्त–ब्रह्मचर्य–सुलक्षणम् ।
स्थापय दशधा धर्ममुत्तमं जिनभाषितम् ।।

(अडिल्ल)

उत्तम क्षमा मारदव आरजव भाव हैं,
सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं।
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं,
चहुँगति–दुखतैं काढ़ि मुकति करतार हैं।।

सरल अर्थ

उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव – ये भाव कहे हैं। उत्तम शौच, उत्तम सत्य, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग – ये उपायभूत हैं। उत्तम आकिंचन्य और उत्तम ब्रह्मचर्य – ये सभी दश धर्म मिलकर धर्म के सार हैं। जो इन्हें अपनी आत्मा में स्वभाव रूप ग्रहण करता है, वह चारों गतियों के दुखों से निकलकर मुक्ति को प्राप्त करने वाले मार्ग को प्राप्त कर लेता है।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु
/Sarvodayaahimsa
+91 9785999100

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

अष्टक

(सोरठा)

हेमाचल की धार, मुनि-चित सम शीतल सुरभि।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥
चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥
अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥
फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरध-लोकलों।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥
नेवज विविध निहार, उत्तम षट्-रस-संजुगत।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥
बाति कपूर सुधार, दीपक-ज्योति सुहावनी।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥
अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥
फल की जाति अपार, घ्रान-नयन-मन-मोहने।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥
आठों दरब सँवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसों।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा॥

सरल अर्थ

जल - हिमवन पर्वत से निकलने वाली गंगा-सिंधु की धारा मुनियों के मन के समान निर्मल, शीतल, सुगंधित हैं; उसी प्रकार संसार ताप को निवारण करने वाले ऐसे दशलक्षण धर्म हैं, इसलिए उनको हमेशा पूजता हूँ।।1।।

चंदन - चंदन-केसर आदि घिसने पर दशों दिशाओं में सुगंध फैल जाती हैं, उसी प्रकार संसार-ताप का निवारण करने वाले ये दश धर्म उत्तम क्षमा आदि हैं। इसलिए मैं उनको हमेशा पूजता हूँ।।2।।

अक्षत - मलरहित, अखंड चंद्रमा के समान सफेद चावल चढ़ाकर अक्षय पद की प्राप्ति की भावना भाता हूँ; उसी प्रकार संसार ताप को निवारण करने वाले ऐसे दशलक्षण धर्म हैं, इसलिए उनको हमेशा पूजता हूँ।।3।।

पुष्प - नाना प्रकार के फूलों की सुगंध से ऊर्ध्व लोक तक सुगंधित हो गया हैं ; उसी प्रकार संसार ताप को निवारण करने वाले ऐसे दशलक्षण धर्म हैं, इसलिए उनको हमेशा पूजता हूँ।।4।।

नैवेद्य - नाना प्रकार के उत्तम मनोहारी व्यंजन छहों रसों से संयुक्त हैं; उसी प्रकार संसार तापको निवारण करने वाले ऐसे दशलक्षण धर्म हैं, इसलिए उनको हमेशा पूजता हूँ।।5।।

दीप - कपूर की बाती वाले दीपक की ज्योति अति मनोहर लगती हैं ; उसी प्रकार संसार ताप को निवारण करने वाले ऐसे दशलक्षण धर्म हैं, इसलिए उनको हमेशा पूजता हूँ।।6।।

धूप - जिस अगर आदि चंदन की धूप की सुगंध विस्तार से सभी जगह फैल रही हैं। ऐसी धूप से संसार-ताप के निवारण हेतु दशलक्षण धर्म की पूजा करता हूँ ।।7।।

फल - घ्राण, नेत्र, मन को आकर्षित करने वाले बहुत जाति के फल हैं; उसी प्रकार संसार ताप को निवारण करने वाले ऐसे दशलक्षण धर्म हैं, इसलिए उनको हमेशा पूजता हूँ।।8।।

अर्घ्य - कवि द्यानतराय जी कहते हैं कि आठों द्रव्यों को एक साथ मिलाकर अत्यधिक उत्साह पूर्वक संसार-ताप का निवारण करने के लिए दशलक्षण धर्म की मैं पूजन करता हूँ ।।9।।

/Sarvodayaahimsa
+91 9785999100

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

उत्तम क्षमा धर्म

(सोरठा)

पीड़ें दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करें।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजें पीतमा ।।

उत्तम छिमा गहो रे भाई, इह-भव जस, पर भव सुखदाई।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औंगुन कहें अयानो ।।
कहि हैं अयानो वस्तु छीनें, बाँध मार बहुविधि करें।
घर तें निकारें तन विदारें, वैर जो न तहाँ धरें ।।
ते करम पूरब किये खोटे, सहें क्यों नहिं जीयरा।
अति क्रोध-अगनि बुझाय प्रानी, साम्य-जल ले सीयरा ।।

सरल अर्थ

अनेक प्रकार बाँधकर, पीटकर या नाना प्रकार से दुष्टों के द्वारा कष्ट दिए जाने पर भी सज्जन क्रोध नहीं करते हैं एवं क्षमा रूपी विवेक को धारण करते हैं।

हे भाई! उत्तम क्षमा को धारण करने से इस भव यश में तथा दूसरे भव में सुख प्राप्त होता हैं। यदि कोई गाली देता हैं तो मन में खेद-शोक नहीं लाना चाहिए। यदि अज्ञानी/मूर्ख लोग अपने गुणों को अवगुण (दोष) भी कहें, हमारी वस्तु भी छीन लें; इतना ही नहीं, कई प्रकार से सताये जाने पर, बाँधे-मारे जाने पर, घर से निकाल देने पर, शरीर को छिन्न-भिन्न कर देने पर भी वैर (दुश्मनी) को धारण नहीं करना चाहिए।

हे जीव! जो पूर्व जन्म में खोटे (पाप) कर्म किए तो सहन करने (भोगने) ही पड़ेंगे। हे जीव! क्रोध रूपी अग्नि को समता रूपी शीतल जल लेकर बुझाना चाहिए। यही उत्तम क्षमा धर्म हैं।

/Sarvodayaahimsa
+91 9785999100

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

उत्तम मार्दव धर्म

(सोरठा)

मान महाविषरूप, करहि नीच-गति जगत में।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावें प्रानी सदा॥
उत्तम मार्दव गुन मन-माना, मान करन को कौन ठिकाना।
बस्यो निगोद माहिं तें आया, दमरी रूँकन भाग बिकाया॥
रूँकन बिकाया भाग वशतें, देव इक-इन्द्री भया।
उत्तम मुआ चाण्डाल हूवा, भूप कीड़ों में गया॥
जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करें जल-बुदबुदा।
करि विनय बहु-गुन बड़े जन की, ज्ञान का पावें उदा॥

सरल अर्थ

मान (अहंकार) हलाहल विष के समान है। यह मान, नीच गतियों को करने वाला है अर्थात् मान के कारण खोटी गतियों में जाना पड़ता है। मार्दव (कोमलता) रूपी अमृत को धारण करने वाला जीव हमेशा सुख पाता है। उत्तम मार्दव को गुण (स्वाभाविक धर्म) मन से माना जाता है और मान करने वाले का कौन-सा ठिकाना है? क्योंकि अनादिकाल से निगोद में रहा, वहाँ से आकर वनस्पति काय का जीव हुआ तो दमरी (दमड़ी) रूँकन (मुद्रा की सबसे छोटी इकाई) के भाव बिका और कभी-कभी बिना मूल्य के ही बिका। तीव्र पुण्य के उदय से देव हुआ और वहाँ से चलकर फिर एक इंद्रिय हुआ। उत्तम पर्याय के बाद चंडाल हो गया और राजा भी कीड़ों में उत्पन्न हुआ।

हे जीव! जीवन, यौवन और धन-दौलत का क्या घमंड करना! ये सब जल के बुलबुले के समान क्षणभर में नष्ट होने वाले हैं। जो बहुत गुणवान हैं, बड़े हैं; उन महापुरुषों की विनय करनी चाहिए, जिससे ज्ञान प्राप्त होता है।

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

सर्वोदय अहिंसा

उत्तम आर्जव धर्म

(सोरठा)

कपट न कीजैं कोय, चोरन के पुर ना बसें।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु-सम्पदा।।

उत्तम आर्जव रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी।
मन में होय सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सौं करिये।।
करिये सरल तिहुँ जोग अपने देख निरमल आरसी।
मुख करें जैसा लखें तैसा, कपट-प्रीति अँगार-सी।।
नहिं लहें लछमी अधिक छल करि, करम-बन्ध विशेषता।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवें, आपदा नहिं देखता।।

सरल अर्थ

कोई भी छल-कपट, मायाचारी मत करो; क्योंकि ऐसा करने वालों अर्थात् चोरों आदि के नगर कभी नहीं बसे (बने)। तात्पर्य यह है कि छल-कपट-चोरी आदि करने से नगरों में नहीं रह पाये। और जो सरल स्वभाव वाले होते हैं, उनके घर में बहुत संपत्ति होती है।

उत्तम आर्जव धर्म परंपरा से जीव का सरल स्वभाव कहा गया है। और थोड़ा-सा भी छल-कपट बहुत-से दुख, कष्ट देने वाला होता है। इसलिए उससे बचने के लिए ही मन में जो हो, सो शब्दों में कहना चाहिए, जो शब्दों में कहा जाये, उसे शरीर से भी करना चाहिए।

इस प्रकार अपने तीनों योगों (मन-वचन-काय) को सरल/एक जैसा कीजिए। जैसे स्वच्छ दर्पण में जैसा हमारा मुख होता है, वैसा ही दिखता है। छल-कपट से प्रीति करना अंगारों से प्रीति करने के समान है। कोई भी अधिक मायाचारी करके धन-संपत्ति प्राप्त नहीं कर सकता, अपितु ऐसा करने से अधिक कर्मों का बंध होता है। छल-कपट करते समय वह कर्मबंध का ध्यान नहीं करता है। जैसे बिल्ली दूध पीते समय भय का त्याग करती है, वह ध्यान नहीं रखती कि पीछे से मार पड़ेगी; उसी प्रकार छल-कपट करने वाला भी कर्म-बंध एवं आपत्ति का ध्यान नहीं रखता है।

सर्वोदय अहिंसा सर्वत्र नन्दतु

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

उत्तम सत्य धर्म

(सोरठा)

कठिन वचन मति बोल, पर-निन्दा अरु झूठ तज।
साँच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी।।

उत्तम सत्य-बरत पालीजें, पर-विश्वासघात नहिं कीजें।
साँचे-झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो।।
पेखो तिहायत पुरुष साँचे को दरब सब दीजिये।
मुनिराज-श्रावक की प्रतिष्ठा, साँच गुण लख लीजिये।।
ऊँचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया।
वच झूठ सेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया।।

सरल अर्थ

कठिन (कठोर) वचन कभी नहीं बोलना चाहिए। दूसरों की निंदा और झूठ वचनों का त्याग करो। सत्यरूपी जवाहर रत्न का उपयोग करने वाला और सत्य बोलने वाला प्राणी, संसार में सुखी रहता है। अतः उत्तम सत्य धर्म का पालन करना चाहिए और दूसरों के साथ विश्वासघात नहीं करना चाहिए। जगत में सच्चे-झूठे मनुष्यों का स्वरूप जानने वाले व्यक्ति, झूठ बोलने वाले अपने पुत्र पर भी विश्वास नहीं करते और सत्य बोलने वाले अन्य का विश्वास कर धन भी देते हैं। सच्चे गुणों या सत्य धर्म को ग्रहण करने से मुनिराजों और श्रावकों की प्रतिष्ठा (सम्मान) होती है। ऊँचे आसन पर बैठकर राजा वसु न्याय किया करता था और मात्र एक झूठ बोलने से नरक में चला गया तथा सत्य बोलने वाला नारद स्वर्ग गया।

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

उत्तम शौंच धर्म

(सोरठा)

धरि हिरदैं सन्तोष, करहु तपस्या देह सों।
शौंच सदा निर्दोष, धरम बड़ो संसार में।।
उत्तम शौंच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना।
आशा-पास महा दुखदानी, सुख पावें सन्तोषी प्रानी।।
प्रानी सदा शुचि शील जप तप, ज्ञान ध्यान प्रभावतें।
नित गंग जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि-दोष सुभावतें।।
ऊपर अमल मल भर्‍यो भीतर, कौंन विधि घट शुचि कहें।
बहु देह मैंली सुगुन-थैंली, शौंच-गुन साधू लहें।।

सरल अर्थ

हृदय में संतोष धारण करके, शरीर से तपस्या करनी चाहिए। निर्दोष शौंच धर्म ही सर्व जगत में प्रसिद्ध हैं। आशा अर्थात् इच्छा रूपी नाग महादुख को देने वाला हैं। संतोष को धारण करने वाले प्राणी सुख प्राप्त करते हैं। यह जीव शील, जप, तप, ज्ञान, ध्यान के प्रभाव से पवित्रता प्राप्त करता हैं। गंगा-यमुना आदि नदियों एवं समुद्रों में निरंतर नहाने से भी पवित्रता नहीं होती; क्योंकि इस शरीर का स्वभाव ही अपवित्र (अशुचि) हैं। यह शरीर ऊपर से तो मल रहित पवित्र दिखाई देता हैं, परंतु इसके भीतर मल भरा हुआ हैं। तब ऐसे शरीर को किस प्रकार से पवित्र कहा जाए। जिनका शरीर तो बहुत मैंला हैं, परंतु जो उत्तम गुणों के भंडार हैं। ऐसे महाव्रती साधु ही इस उत्तम शौंच गुण को प्राप्त करते हैं।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु
/Sarvodayaahimsa
+91 9785999100

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

उत्तम संयम धर्म

(सोरठा)

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्रिय मन वश करो।
संजम-रतन सँभाल, विषय-चोर बहु फिरत हैं।।

उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजें अघ तेरे।
सुरग-नरक-पशुगति में नाहीं, आलस-हरन करन सुख ठाँ हीं।।
ठाहीं पृथीवी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो।
सपरसन रसना घ्रान नैंना, कान मन सब वश करो।।
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग-कीच में।
इक घरी मत विसरो करो नित, आयु जम-मुख बीच में।।

सरल अर्थ

छह काय के जीवों की रक्षा और पाँच इंद्रियाँ एवं मन को वश में करना चाहिए। विषय-कषाय रूपी चोर बहुत घूम रहे हैं, इसलिए संयम रूपी रत्न सँभाल कर रखो। हे मेरे मन! उत्तम संयम धर्म को ग्रहण करो, जिसके कारण अनेकानेक भवों के पाप नष्ट हो जायेंगे। आलस्य को हरने वाला और सुख को देने वाला यह उत्तम संयम धर्म देव, नरक, तिर्यंच (पशु) गति में नहीं होता है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति - ये पाँच स्थावर और त्रस - इन छह काय के जीवों की दया धारण कर स्पर्शन (त्वचा), रसना (जीभ), घ्राण (नाक), चक्षु (आँख), कर्ण (कान) एवं मन को वश में करो। इस संयम के अभाव में जिनराज (तीर्थंकर) भी मोक्ष प्राप्त नहीं कर पाए अर्थात् जब तक तीर्थंकर गृहस्थ अवस्था में थे, उन्होंने संयम अंगीकार नहीं किया था, तब तक वे मोक्ष को प्राप्त नहीं कर सके थे।

इसलिए हे जीव! इस संयम को ग्रहण न करने के कारण से ही तुम संसार रूपी कीचड़ में फँसे हो। हम निरंतर मृत्यु रूपी यमराज के मुख की ओर जा रहे हैं। इसलिए उत्तम संयम धर्म को एक क्षण को भी नहीं भूलना चाहिए।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

उत्तम तप धर्म

(सोरठा)

तप चाहें सुरराय, करम-शिखर को वज्र हैं।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करें निज सकतिसम ॥

उत्तम तप सब माहिं बखाना, करम-शैल को वज्र-समाना।
बस्यो अनादि निगोद मँझारा, भू विकलत्रय पशु तन धारा ॥
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता।
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता ॥
अति महा दुरलभ त्याग विषय-कषाय जो तप आदरें।
नर-भव अनूपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरें ॥

सरल अर्थ

उत्तम तप धर्म को देवों के राजा (इंद्र) भी चाहते हैं। यह तप कर्म रूपी पर्वतों को नष्ट करने के लिए वज्र के समान है। ये बारह प्रकार के तप सुख को देने वाले हैं तो क्यों न उन्हें अपनी शक्ति के अनुसार धारण करें। कर्म रूपी पर्वतों को नष्ट करने के लिए उत्तम तप धर्म वज्र के समान सभी शास्त्रों में कहा है। यह जीव अनादि काल से निगोद में रहा है। वहाँ से निकलकर पृथ्वी आदि स्थावर एवं उसके बाद दो इन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय आदि हुआ; फिर तिर्यंच (पशु) का शरीर धारण किया। अब यह मनुष्य पर्याय बड़ी कठिनता से धारण की। उसमें भी उत्तम कुल, पूर्ण आयु, निरोगी शरीर, जिनवाणी का संयोग, तत्त्वज्ञान, आत्मचिंतन में उपयोग बड़ी दुर्लभता से प्राप्त हुआ। जो जीव महा कठिन विषय और कषाय का त्याग कर तप को आदर पूर्वक ग्रहण करते हैं, वे मनुष्य भव रूपी अलौकिक स्वर्ण घर पर, नीलमणि आदि रत्नमय कलश चढ़ाते हैं अर्थात् मनुष्य जन्म को सार्थक बनाते हैं।

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

उत्तम त्याग धर्म

(सोरठा)

दान चार परकार, चार संघ को दीजिए।
धन बिजुली उनहार, नर-भव लाहो लीजिए।।

उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा।
निहचैं राग-द्वेष निरवारैं, ज्ञाता दोनों दान सँभारैं।।
दोनों सँभारैं कूप-जल सम, दरब घर में परिनया।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया।।
धनि साध शास्त्र अभय दिवैया, त्याग राग विरोध को।
बिन दान श्रावक साधु दोनों, लहैं नाहीं बोध को।।

सरल अर्थ

दान चार प्रकार का हैं। ये चार संघ अर्थात् मुनि, आर्यिका, श्रावक-श्राविका को देना चाहिए। धन, सम्पत्ति, वैंभव, बिजली की चमक की तरह हैं। अतः दान देकर मनुष्य भव का लाभ ले लेना चाहिए।

समस्त संसार में उत्तम त्याग धर्म श्रेष्ठ कहा गया हैं। औंषधि-दान, शास्त्र-दान, अभय-दान, आहार-दान - ये तो व्यवहार त्याग के रूप में हैं। राग औंर द्वेष का निवारण करना (त्यागना) निश्चय त्याग हैं।

बुद्धिमान लोग दोनों दान (व्यवहार औंर निश्चय) करते हैं। कुएँ का पानी नहीं निकालने पर खराब हो जाता हैं औंर उससे अधिक बढ़ता भी नहीं हैं तथा निकालने पर खराब नहीं होता एवं जितना निकालते हैं, उतना फिर से भर जाता हैं। उसी प्रकार घर में धन, वैंभव की दान के अभाव में स्थिति बनती हैं। इसलिए धन-सम्पत्ति को अपने हाथ से दान देकर साथ में ले लीजिए। धन-वैंभव खाने-पीने में खर्च करना तो बह जाने के समान हैं, वह नष्ट हो जायेगा; लेकिन साथ रहने वाला नहीं हैं। धन्य हैं वे साधु, जो ज्ञानदान, अभयदान देने वाले हैं औंर राग-द्वेष इत्यादि विकारों का त्याग करने वाले हैं। दान के बिना श्रावक औंर साधु सम्यग्ज्ञान को प्राप्त नहीं करते।

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

उत्तम आकिंचन्य धर्म

(सोरठा)

परिग्रह चौंबिस भेद, त्याग करैं मुनिराजजी।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए॥

उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिन्ता दुख ही मानो।
फाँस तनक-सी तन में सालैं, चाह लँगोटी की दुख भालैं॥
भालैं न समता सुख कभी नर, बिना मुनि-मुद्रा धरैं।
धनि नगन पर तन-नगन ठाड़े, सुर-असुर पायनि परैं॥
घर माहिं तिसना जो घटावे, रुचि नहीं संसार सौं।
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर-उपगार सौं॥

सरल अर्थ

परिग्रह के चौंबीस भेद होते हैं। उनका त्याग मुनिराज करते हैं और तृष्णा भाव को क्षय करते हैं। इसी प्रकार श्रावकों को भी धीरे-धीरे दोनों प्रकार के (अंतरंग और बहिरंग) परिग्रहों को कम करना चाहिए। उत्तम आकिंचन्य उत्कृष्ट गुण जानना चाहिए। परिग्रह की चिंता दुख देने वाली मानो। जिस प्रकार छोटी-सी फाँस लग जाने पर पूरे शरीर में कष्ट देती है, उसी प्रकार एक लँगोटी की इच्छा दुख देने वाली है। दिगंबर मुनि की मुद्रा को धारण किए बिना मनुष्य कभी समता और सुख प्राप्त नहीं कर सकता है। वे मुनिराज धन्य हैं जो पर्वतों पर नग्न खड़े रहकर तप करते हैं, उनके चरणों की सुर-असुर आदि अर्चना करते हैं। घर में रहते हुए भी जो अपनी तृष्णा को घटाते हैं और संसार में अपनी रुचि नहीं रखते हैं, वे श्रावक भी धन्य हैं। बहुत धन-सम्पत्ति तो बुरी ही होती है, परंतु जो धन परोपकार में लगता है, वह फिर भी श्रेष्ठ कहा गया है।

/Sarvodayaahimsa
+91 9785999100

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

(सोरठा)

शील-बाढ़ नौं राख, ब्रह्म-भाव अन्तर लखो।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नर-भव सदा ।।

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौं, माता बहिन सुता पहिचानौं।
सहैं बान-वरषा बहु सूरे, टिकैं न नैंन-बान लखि कूरे ।।
कूरे तिया के अशुचि तन में, काम-रोगी रति करैं।
बहु मृतक सड़हिं मसान माहीं, काग ज्यों चोंचैं भरैं।।
संसार में विष-बेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरम दश पैंड़ि चढ़ि कैं, शिव-महल में पग धरा ।।

सरल अर्थ

शील की रक्षा नौं बाड़ों को लगाकर करनी चाहिए (व्यवहार ब्रह्मचर्य) और अंतर में आत्मचिंतन करना चाहिए। (निश्चय ब्रह्मचर्य) निश्चय एवं व्यवहार ब्रह्मचर्य की प्राप्ति के इच्छुक होकर मनुष्य जन्म सार्थक करना चाहिए। मन में ब्रह्मचर्य धारण कर माता, बहिन, पुत्री की पहचान करना चाहिए। वीरों के द्वारा होने वाली बाणों की वर्षा को यह जीव सहन कर लेता है, परंतु कुशील स्त्रियों के विकारी नेत्र रूपी बाण को सहन नहीं कर पाता। ऐसे काम रूपी रोग से पीड़ित स्त्री के अपवित्र शरीर में उसी प्रकार रति (प्रेम) करता है; जिस प्रकार श्मशान भूमि में सड़े हुए मृतक शरीर को कौआ प्रेमपूर्वक चोंच भरकर खाता है।

संसार में नारी को विष-बेल के समान कहा गया है, जिसका सभी मुनिराजों ने त्याग कर दिया है। यहाँ कवि द्यानतरायजी कहते हैं कि ये दश धर्म रूपी सीढ़ियाँ चढ़कर जीव मोक्ष रूपी महल में प्रवेश हो जाता है।

(स्त्रियों को विष-बेल कहने का अभिप्राय स्त्रियों के प्रति काम की इच्छा रखना है, बहिन अथवा माता के प्रति राग रखना नहीं है।)

सर्वोदय अहिंसा सर्वः सर्वत्र नन्दतु

पण्डित द्यानतराय जी द्वारा रचित

दशलक्षण धर्म पूजन

समुच्चय जयमाला

(दोहा)

दश लच्छन वन्दौं सदा, मनवांछित फलदाय।
कहों आरती भारती, हम पर होहु सहाय।।

(चौपाई)

उत्तम छिमा जहाँ मन होई, अन्तर-बाहिर शत्रु न कोई।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासे, नाना भेद ज्ञान सब भासे।।
उत्तम आर्जव कपट मिटावे, दुरगति त्यागि सुगति उपजावे।
उत्तम शौच लोभ-परिहारी, सन्तोषी गुण-रतन भण्डारी।।
उत्तम सत्य-वचन मुख बोले, सो प्रानी संसार न डोले।
उत्तम संजम पाले ज्ञाता, नर-भव सफल करै, ले साता।।
उत्तम तप निरवांछित पाले, सो नर करम-शत्रु को टाले।
उत्तम त्याग करे जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई।।
उत्तम आकिंचन व्रत धारे, परम समाधि दशा विसतारे।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावे, नर-सुर सहित मुकति-फल पावे।।

(दोहा)

करै करम की निरजरा, भव पींजरा विनाशि।
अजर अमर पद को लहैं, 'द्यानत' सुख की राशि।।

सरल अर्थ

दशलक्षण धर्म की मैं हमेशा वंदना करता हूँ। ये मन के अनुकूल (मनवांछित) फल को देने वाले हैं। मैं दशधर्मों की आरती को कहता हूँ। हे भगवन! हम पर कृपा करें।

जिसके मन में उत्तम क्षमा होती है, उसके मन में अंतरंग एवं बहिरंग दोनों प्रकार के राग-द्वेष आदि विकारी भाव, आत्मा के अंदरूनी शत्रु और बाहरी शत्रु नहीं रहते हैं। उत्तम मार्दव धर्म, विनय गुण को प्रकाशित करके सम्यग्ज्ञान के नाना प्रकार के (आठ प्रकार) के भेदों का प्रकाश कराता है।।1।।

उत्तम आर्जव धर्म मायाचारी छल-कपट आदि को मिटाकर एवं खोटी गतियों से हटाकर उत्तम गतियों में उत्पन्न करवाता है। मुख से जो कोई उत्तम सत्य वचन बोलता है, वह प्राणी संसार में घूमता नहीं है।।2।।

लोभ कषाय को दूर करने वाला उत्तम शौच धर्म है। संतोषी प्राणी गुणों के भंडारी होते हैं, जो ज्ञानीजन उत्तम संयम धर्म को धारण करते हैं, वे सुख-शांति को प्राप्त करके मनुष्य जन्म को सार्थक करते हैं।।3।।

जो उत्तम तप को इच्छा रहित होकर पालता है, वह मनुष्य कर्म रूपी शत्रुओं को नष्ट कर देता है और जो व्यक्ति उत्तम त्याग धर्म का पालन करते हैं, वे भोगभूमि और स्वर्ग के सुख को भोगकर मोक्ष-सुख को प्राप्त करते हैं।।4।।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु